International Journal of Multidisciplinary Education and Research
ISSN: 2455-4588; Impact Factor: RJIF 5.12
Received: 06-02-2020; Accepted: 07-03-2020; Published: 09-04-2020
www.educationjournal.in
Volume 5; Issue 2; 2020; Page No. 28-30

काशीनाथ सिंह के कथा–साहित्य का वैचारिक विकास

विनय शंकर
शोधार्थी, विश्वविद्यालय हिन्दी–विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगां, बिहार, भारत

सारांश
काशीनाथ सिंह के कथा–साहित्य के वैचारिक विकास का आधार उनका परिवार, उनके साहित्यकार मित्र और बड़े भाई नामवर सिंह रहे हैं, जिन्होंने कदम–कदम पर उनके लेखन एवं वैचारिक विकास में योगदान दिया। उन्होंने अपनी रचना–प्रक्रिया, रचनाओं, घर–परिवार, नौकरी–राजनीति और गाँव–शहर आदि पर खुलकर बातें की हैं। जीवन से गहरा संबंध रखने वाला ही यह कह सकता है ''भाई, माँ, बाप, बीवी, बेटी जिसके पास नहीं होते वे ही चिड़ियों, पहाड़ों पर कविता, किस्से लिखा करते हैं।'' काशीनाथ सिंह ने अपनी वैचारिक दृष्टि को तीव्र एवं पैनी करने के लिए भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों विचारकों का अत्यंत गहराई के साथ अध्ययन किया। उन्होंने अपनी वैचारिकी के आधार पर ही जीवन के समस्त, बुनियादी एवं महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर अपनी लेखनी चलाई, जिसके कारण आज उन्हें समकालीन कथाकारों में एक विशिष्ट श्रेणी में रखा जाता है।

मूल शब्द: काशीनाथ सिंह, नौकरी–राजनीति, साहित्यकार मित्र

प्रस्तावना
काशीनाथ सिंह के वैचारिक विकास में बनारस के वातावरण, परिवेश और वहाँ की संस्कृति, रहन–सहन, वेश–भूषा आदि का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। वे लगभग 50 वर्षों तक बनारस में रहे हैं, इसीलिए उनके कथा–साहित्य में बनारसी संस्कृति पूरी तरह समाहित है। जहाँ वह गंवई संस्कृति का चित्रण करने में सिद्धहस्त हैं, वहीं शहरी संस्कृति का चित्रांकन करने में भी पीछे नहीं हैं, जिस तरह सूरदास ने अपनी बंद आँखों से वात्सल्यभाव का कोना–कोना झाँका है। ठीक उसी तरह काशीनाथ सिंह ने गाँव, नगर, शहर, समाज, परिवार के लोगों के परिवेश, रहन–सहन, वेश–भूषा, भाषा–शैली और संस्कृति को यथार्थपरक रूप में अपने कथा–साहित्य में चित्रित किया है। बनारस का चित्रण करते हुए काशीनाथ लिखते हैं,

''अखण्ड हरकीर्तनों का शहर!
रात–रात कटवालियों और बिरहा–दंगलों का शहर!
कंधे पर लंगोट या लंगोट की बांधे सिर का शहर!
पान की दुकान के आगे सुबह–शाम,
गप्पेमारता और ठहाके लगाता शहर!
गलियों और गालियों, घाटों और मालियों,
हर–हर महादेव के नारों और तालियों का शहर
प्राणों से प्यारा शहर
दुनिया में न्यारा शहर
आंखों का तारा शहर
मस्ती का मारा शहर
हाय–हाय हमारा शहर।''(1)

काशीनाथ सिंह को बनारस के आमजनों की भाषा ने भी प्रभावित किया है, जिसका हू–ब–हू चित्रण उन्होंने अपने कथा–साहित्य में किया है। उन्होंने अस्सी चौराहे पर रहने वाले लोगों की भाषा को अपने उपन्यास 'काशी का अस्सी' में प्रस्तुत किया है। वे लिखते हैं, ''खड़ाऊँ पहनकर पाँव लटकाए पान की दुकान पर बैठे तन्नी गुरु से एक आदमी ने बोला– 'किस दुनिया में हो गुरु! अमरीका रोज–रोज आदमी को चन्द्रमा पर भेज रहा है और तुम घण्टे–भर से पान घुला रहे हो?' मोरी में पच्च से पान की पीक थूक कर गुरु बोले– 'देखो! एक बात नोट कर लो! चन्द्रमा हो या सूरज भोंसड़ी जिसको गरज होगी, खुदै यहाँ आएगा। तन्नी गुरु टस से मस नहीं होंगे हियाँ से! समझे कुछ?''(2)

काशीनाथ सिंह की वैचारिक दृष्टि किसी बनी–बनायी परिपाटी या पीछे के किसी कथाकार को लेकर नहीं बनी है, बल्कि उन्होंने अपने समय के साथ जीवन के तमाम पहलुओं को देखा–परखा है। उनकी वैचारिकी मानव जाति के जीवन संबंधों, जिंदगी के अनुभवों, उनकी परिस्थितियों एवं परिवेश से ली गई है। वे ''जिंदगी के अनुभव को लिखने के लिए आवश्यक मानते हैं। इसी से विश्वसनीय यथार्थ जन्म लेता है। कहानी केवल विचारों से नहीं बनती है। वह बनती है समाज के अनेक स्तरों पर फैली ज़िंदगी से, जो किसी–न–किसी रूप में अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही है।''(3) काशीनाथ सिंह अपनी कहानियों और उपन्यासों में किसी काल्पनिक या मनगढ़ंत कहानी को नहीं गढ़ते, बल्कि वे समाज के वास्तविक, सच्चे तथा यथार्थ मानव–जीवन के आस–पास घूमती हुई जिंदगी को गढ़ते हैं। मानव जीवन के हर उस पहलू को एक नया कोण देते हैं, जो उसके जीवन का वास्तविक यथार्थ होता है, जिससे वह जूझ व संघर्ष कर रहा है। उनके कहानी पात्रों की समस्याएँ उनकी अपनी नहीं है, बल्कि समाज के उस हर वर्ग की है, जो उससे जूझ रहा है। काशीनाथ सिंह ने अपनी कहानियों में वही लिखा, जो वह देखते हैं, जीते हैं। उन्होंने कभी–भी समाज सुधारक की भूमिका का दावा नहीं किया। वे हमेशा इस लेखकीय पाखण्ड से मुक्त रहे। उनकी कहानियों के पात्र पाठकों के साथ सहज ही तादात्म्य बना लेते हैं। रामदेव सिंह ने लिखा है, ''काशीनाथ सिंह की रचनाओं में, न तो 'विचारधारा' का उपदेश है, न ही किसी आदर्श जीवन की वकालत। समाज के बदलने का कोई मूर्त या अमूर्त सिद्धांत भी वे नहीं देते हैं। वे मनुष्यता के पक्ष में, बेहतर समाज के पक्ष में पाठकों की संवेदना को कुरेदते जरूर हैं। उनकी कहानियों का मनुष्य आकाश से अवतरित नहीं होता है। वह अपने–अपने 'जेनेटिक कोड' के साथ इसी दुनियाँ में पैदा हुआ है, जिसमें प्रेम, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष आदि सभी तत्त्व मौजूद हैं। उनकी कहानियों के केन्द्र में ऐसे मनुष्य होते हैं, जो पाठकों के

साथ एक तादात्म्य बनाते हैं।''(4)

काशीनाथ सिंह ने जब भी लिखा, जो भी लिखा वह ऊल–जजूल नहीं लिखा। लिखने के साथ–साथ बड़े भाई नामवर सिंह से जरूर भेंट करते हैं। काशीनाथ सिंह ने कुछ कहानियाँ लिखीं। वे कहानियाँ लिखते और लिखने के बाद उड़ानें भरते, जैसे रचना–कर्म बहुत आसान है, कुछ भी लिखो छप जाएगा। इन कहानियों को पढ़ने के लिए उन्होंने बड़े भाई को दिया। कई दिनों की चुप्पी के बाद नामवर सिंह ने काशीनाथ से सिगरेट मंगवाई और पीने को दिया। सिगरेट खत्म होने पर नामवर सिंह ने काशीनाथ सिंह से कहा, ''तुमने एक जगह लिखा है 'सिगरेट बुझ गई। देखा तुमने बुझती बीड़ी है सिगरेट नहीं...। जिस चीज के बारे में नहीं जानते उसे मत लिखा करो।... और इधर देखो, और तो पढ़ा नहीं मैंने, लेकिन इस कहानी के ये वाक्य निकाल दिए जाएं तो कोई हर्ज होगा।''(5) काशीनाथ सिंह के लिए नामवर सिंह द्वारा दी गई यह प्राथमिक शिक्षा थी। नामवर सिंह के इस वक्तव्य का काशीनाथ सिंह पर एक और प्रभाव यह पड़ा कि काशीनाथ सिंह के लिए साहित्य बड़ी और गंभीर चीज हो गई। काशीनाथ सिंह ने लिखा है, ''यह मेरे कहानीकार के लिए 'क', 'ख', 'ग' था। उस समय तक मैंने लिखने और छपने के काम को यानी एक शब्द में साहित्य को, बड़ी हल्की–फुल्की चीज़ समझ रखा था, लेकिन वह सहसा बड़ी गंभीर और महत्त्वपूर्ण चीज हो गई।''(6)

काशीनाथ सिंह ने साहित्य को बड़ी गंभीरता से लेना शुरू कर दिया। उन्होंने अपने समकालीन युवा कथाकारों की सभी कहानियाँ पढ़ी और कहानी से संबंधित उनके दृष्टिकोण को जाना। काशीनाथ सिंह पर इस गहन अध्ययन का प्रभाव उल्टा पड़ा। यह गहन अध्ययन उनके कहानीकार व्यक्तित्व को एक दृष्टिकोण न देकर उन्हें और 'कंफ्यूज' कर दिया, ''मुझे लग गया कि ये सब बड़ी ऊँची और गूढ़ चीजें हैं, जिन्हें मैं काफी अध्यवसाय और ज्ञान के बाद ही समझ सकुँगा। नतीजा यह कि अपने लिए रास्ता चुनने के चक्कर में और अधिक कंफ्यूज हो गया। यह लगभग '60' से '63' तक का किस्सा है।''(7)

कुछ दिनों तक काशीनाथ सिंह किताबी ज्ञान को लेकर इधर–उधर घूमते फिरे कि कोई मिले, जो उन्हें रोशनी दिखा दे। तभी उनकी मुलाकात अपने बचपन के सहपाठी कैलाश से हुई। कैलाश एक कमजोर छात्र था। उसने किसी तरह हाई स्कूल की परीक्षा पास कर ली थी, परंतु उसके बातचीत करने का अंदाज निराला और अलग था। कैलाश के बात करने के अंदाज और आत्मविश्वास से काशीनाथ सिंह प्रभावित हुए। उन्हें कैलाश की बातों से विश्वास हो गया कि किताबी ज्ञान बेकार है। असल चीज है जिंदगी और उसके अनुभव, ''हम हाई स्कूल के बाद पहली बार मिले थे और जानते हुए भी कि मैं जल्दी ही कहीं बी0 ए0, एम0 ए0 के लड़कों को पढ़ाने लगूँगा, वह मुझसे ऐसे बात करता रहा, जैसे उसके आगे मैं कोई बच्चा हूँ। बड़े–बड़े गलमुच्छे तना–सीना, अकड़ी गर्दन, चेहरे पर आत्मविश्वास और वह अपनी जिंदगी की ढेर सारी घटनाएँ सुनाता रहा। उसने मुझे विश्वास करा दिया कि किताबें और ज्ञान बेकार हैं, असल चीज़ है, ज़िंदगी, उसके अनुभव, उलट–फेर।...''(8)

कैलाश से प्रभावित होकर काशीनाथ सिंह ने अपनी ज़िंदगी और उसके अनुभव के आधार पर 'संकट', 'आखिरी रात', 'बैलून', 'सुख', आदि कहानियाँ लिखीं। काशीनाथ सिंह ने 'बैलून' कहानी को नामवर सिंह को पढ़ने के लिए दिया। नामवर सिंह को यह कहानी बिल्कुल पसंद नहीं आई। इस कहानी में काशीनाथ सिंह ने सयानी होती हुई लड़की के बारे में एक वाक्य लिखा था। ऊपर की ओर जरा–सा इधर, नीचे की ओर जरा–सा उधर। इस वाक्य के संदर्भ में नामवर सिंह ने काशीनाथ सिंह को, ''पहले कालिदास का श्लोक सुनाया, फिर बिहारी का दोहा और बोले 'ढूंढो तो संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी तमाम पुराने–नए साहित्य में सैकड़ों उदाहरण मिल जाएँगे, जो इससे बेहतर हैं। यह उसी स्थिति की 'पुनरावृत्ति' और वह भी हल्की और घटिया। उनसे आगे बढ़ के कोई बात की होती तो एक बात थी।''(9)

काशीनाथ सिंह ने ठान लिया था कि अब कैसे भी हो मुझे कुछ अलग ही करना है। उन्होंने विचार किया, कड़ी मेहनत कर एक छोटी कहानी लिखी। बहुत मेहनत करने के बाद भी उन्हें इस एक छोटी कहानी का शीर्षक नहीं सूझा। उन्होंने लाचार होकर यह कहानी बड़े भाई नामवर सिंह को दी। नामवर सिंह ने कहानी पढ़ कर काशीनाथ सिंह से कहा, ''देखो मैंने कुछ नहीं किया, कहानी को सिर्फ एक अर्थ दे दिया है। इसका शीर्षक है– सुख।''(10) नामवर सिंह अक्सर काशीनाथ सिंह की कहानियाँ पढ़ते। पेंसिल से निशान लगाकर कहानी से संबंधित बहुत सारे सुझाव दे देते। काशीनाथ सिंह की 'सुख' पहली ऐसी कहानी थी, जिस पर नामवर सिंह ने कहीं पर पेंसिल से निशान नहीं बनाया। रामदेव सिंह ने लिखा है, ''वे कहानियों के लिए कोई बड़ा प्लाट नहीं ढूँढते बल्कि रोजमर्रे के जीवन से ही उन अनुभवों को कहानियों में रूपांतरित करते हैं, जो बहुत ही सूक्ष्म होते हैं और रचनात्मक इस्तेमाल के समय फिसल जाने वाले होते हैं।

काशीनाथ सिंह की यह रचना शक्ति अद्भुत है। कई बार दंग रह जाना पड़ता है कि, 'सुख', 'बैल', 'चोट', 'संकट' और 'आखिरी रात' जैसी कहानियाँ उन्होंने कैसे लिखीं।''(11) काशीनाथ सिंह की वैचारिकता बनावटी या ऊल–जलूल नहीं है। वह जैसे–जैसे लोगों से मिलते गये, उन्हें विश्वास होता गया कि हर आदमी के पास ऐसा कुछ है, जिसे सीखा जा सकता है। मुझे लिखना है और मिलने–जुलने वाले प्रत्येक व्यक्ति को यहाँ तक की उसकी शारीरिक बनावट को भी गौर से देखना चाहिए। यदि उसके व्यक्तित्व में कुछ खास बातें हों, उसके अपने विशिष्ट अनुभव हों, तो उससे संपर्क बनाना चाहिए, उसका पीछा करना चाहिए और भरसक अपने लेखकीय इरादे को छिपाते हुए उसे खुलने का मौका देना चाहिए। उसी दौरान उन्होंने यह भी जाना कि किसी भी आदमी की दिलचस्पी जानी या देखी हुई चीज़ों को जानने में नहीं होती।

काशीनाथ सिंह पर चेखव का सर्वाधिक प्रभाव दिखाई पड़ता है। उस समय हिंदी लेखकों में सार्त्र, काफ़्का, कामू वगैरह की धूम मची हुई थी और उनके प्रभाव में हर लेखक अपने बारे में अपनी मुश्किलों और ऊब और घुटन और अकेलेपन के बारे में लिख रहा था। काशीनाथ सिंह भी काफी दिनों तक बड़े असमंजस में पड़े रहे, क्योंकि उनके उस्ताद यानी क्रांतिपूर्व रूसी लेखक और प्रेमचंद उन्हें दूसरा पाठ पढ़ा रहे थे। मसलन चेखव ने कहा, ''अपने बारे में लिखना जितना आसान है, उतना ही खतरनाक और मुश्किल। खतरनाक इसलिए कि कथाकार तटस्थ और ईमानदार नहीं रह पाता। बहुत जल्दी भावुक हो उठता है। उसे लिखना ही हो, तब लिखना चाहिए जब वह 'मेच्योर' हो जाए, अपने प्रति निर्मम हो सके, अपने को दूसरा आदमी मानकर दूर से देख सके।''(12)

काशीनाथ सिंह की वैचारिक दृष्टि अपने दौर के कथाकारों से अलग है। इसी आधार पर उन्होंने अपने कथा–साहित्य में समाज, राजनीति, धर्म, भाषा आदि को प्रतिबद्ध कर दिया है। एकाध अपवादों को छोड़कर पिछड़ी पीढ़ी के लेखकों में आत्मसंकोच का भाव मिलता है। जब भारतीय समाज और राजनीति पर भूमंडलीकरण की नीतियों ने प्रहार करना शुरू किया था। यहाँ वे भूमंडलीकरण, धर्म, समाज, भाषा, राजनीति और साहित्य पर अपना मत खुलकर रखते हैं। उनके लेखन में दिलचस्पी रखने वाले पाठकों के लिए ही नहीं, बल्कि हिंदी कथा–साहित्य में रुचि रखने वाले अध्येताओं के लिए भी यहां काम की बातें मिलती हैं। ऐसी बातें जो हम जानते जरूर हों, लेकिन मुँह से कहना नहीं चाहते।

काशीनाथ सिंह का 'कथा–साहित्य' उनके विचारों का आत्मफल

है, जिसके लिए वह किसी प्रकार का जोखिम उठाने में आगे पीछे नहीं सोचते और कबीर, भारतेंदु, प्रेमचन्द की परंपरा के नए वाहक बनते हैं। इस संदर्भ में वे अपनी पीढ़ी के अकेले कथाकार हैं। अपने लिखे पर मुग्ध होकर बात करना उनका मिजाज नहीं है, लेकिन नई कहानी के बाद के निषेधवादी रुझानों से टकराने वाली रचनाओं पर दो टूक कहने में नहीं हिचकिचाते हैं। कहानी के इतिहास और हलचलों के अनेक ब्यौरे उनकी बात चीत में आए हैं। उनके लेखन के लंबे समय की तरह ये लंबे और व्यापक परिदृश्य को समेटते चले हैं। अकहानी, समांतर कहानी, जनवादी कहानी या समकालीन कहानी आंदोलनों की वैचारिकता के सवाल, पर वे चुप नहीं रह जाते। कहीं समझा गया था कि काशीनाथ अकहानी से प्रभावित थे। फिर 'मुसइ चा' और 'लाल किले का बाज' से उन्हें नक्सलवाद का समर्थक रचनाकार माना जाने लगा। यही कथाकार हमारे दौर में 'पांडे कौन कुमति तोहें लागी' जैसी कहानी लिखता है, तो फिर कहानी के पंडित अचरज में पड़ जाते है कि भला इसे क्या समझा जाए? यह एक लेखक का रचनात्मक प्रत्युत्तर है, जो शास्त्र और लोक के द्वंद्व में निःसंकोच लोक के पक्ष में चला जाता है। काशीनाथ सिंह लोक की परिभाषा देते हुए लिखते हैं, ''तो, भाई, मैं कहानी लिखता हूँ। कहानी कहने, सुनने की चीज़ है। ऐसा कोई बकचोद लेखक न होगा जो चाहे कि मैं कहानी सुनाऊँ और सुनने वालों में कोई जम्हाई ले, कोई कान खोदे, कोई चुतड़ खुजलाता रहे और कोई मुस्की मारे और यह सब तब मुमकिन है जब कहानी में दम हो, ढंग में सुनने वालों का बाँधने की ताकत हो।''[13]

कहानी लेखन में काशीनाथ सिंह का जैसे–जैसे अनुभव बढ़ता गया, वैसे–वैसे उनकी कहानियों के कथानक के दायरे में वृद्धि होने लगी। पहले जहाँ काशीनाथ किसी आदमी का हुलिया, दृश्य या घटना का वर्णन करते थे। वहीं अब वे अपने आस–पड़ोस एवं गाँव–गिराव की ज़िंदगी में धँसने लगे। कम–से–कम शब्दों और छोटे वाक्यों में उसका आकार खड़ा करने की कोशिश करने लगे। ऐसा आकार जो साफ–साफ दिखाई पड़े। धीरे–धीरे उन्हें एहसास हुआ कि ऐसे काम नहीं चलेगा, जिस भी चीज़ को देखो, यह मानकर देखो कि इसे तुमने इससे पहले कभी नहीं देखा था, कि तुम पहली बार देख रहे हो और यह भी कि इसे इस धरती पर देखने वाले तुम पहले आदमी हो। काशीनाथ सिंह की 'सुख' कहानी इसी परिस्थिति एवं वैचारिकता का परिणाम है, जिसने उन्हें इस गहराई में डूबने के लिए लाचार किया और उस 'देखने' या 'सुनने' या 'छूने' की संवेदना को सोख्ते की तरह महसूस करना सिखाया।

सामाजिक विषयों पर गहरी जानकारी होने के बाद ही रचनाकर्म करना चाहिए, वरना रचना में वह संवेदना व्यक्त नहीं हो पाएगी, जो कि एक साहित्यिक रचना में होनी चाहिए। बौद्धिक विमर्श की प्रक्रिया में साहित्य के स्वरूप को लेकर तमाम तरह के मत दिखाई देते हैं। वास्तविकता को जाने बिना किसी कार्य को नहीं करना चाहिए, क्योंकि साहित्य का कार्य समाज को सही रास्ता दिखाना है, जो सही मूल्यों को समाज में स्थापित करने में सहायक सिद्ध हो सके। राजनीतिक रूप से किये गए कार्यों में बहुत अंतर नहीं होता, बल्कि साहित्यिक मूल्यों के प्रति रचनाकार को सचेत होना अधिक आवश्यक है। कथाकार अपने आस–पास के वातावरण और सामाजिक परिवेश से अधिक प्रभावित होता है। उसके व्यक्तित्व का वैचारिक विकास सामाजिक–सांस्कृतिक दृष्टि से होता है।

साठोत्तरी पीढ़ी के जिन कथाकारों ने हिंदी कहानी को नई दिशा देने का काम किया था, उन्हीं में से एक काशीनाथ सिंह हैं। हिंदी कहानी के चार यार के नाम से चर्चित कथाकारों में काशीनाथ सिंह अपनी कहानी की जमीन और कथा चरित्रों के कारण अलग से पहचाने जाते हैं। वे इस पीढ़ी के अकेले ऐसे कथाकार हैं, जो अपनी लम्बी कथा–यात्रा में अपनी ग्रामीण जमीन और देशज यथार्थ पर अब भी जमें हुए हैं, जबकि उन्हीं के साथ के कई कथाकारों ने अपनी जमीन भी बदली और सरोकार भी। चार यारों में से ज्ञान रंजन ने 25 साल पहले ही कहानी लिखना बंद कर दिया, जबकि रवीन्द्र कालिया, दूधनाथ सिंह सामाजिकता की ओर मुड़ जाते हैं, लेकिन काशीनाथ सिंह के कथा–साहित्य में ग्रामीण जीवन, देशज यथार्थ आज भी अपने वही तेवर और मुहावरे के साथ कायम है। वहाँ पर परिवार, गाँव, नगर, समाज, शहर सब कुछ है। 'अपना मोर्चा', 'काशी का अस्सी' और 'रेहन पर रग्घू' हो या 'लोग बिस्तरों पर' हो या 'सुबह का डर' और 'कविता की नई तारीख' जैसे कहानी संग्रह या 'किस्सा साढ़े चार यार' जैसी संस्मरणात्मक रचना। काशीनाथ सिंह का अंदाज–ए–बयाँ अलग ही दिखता है।

निष्कर्ष

काशीनाथ सिंह के वैचारिक विकास में उनकी भाषा और परिवेश का भी महत्त्वपूर्ण योगदान देखा जा सकता है। वे बनारस की संस्कृति, वहाँ की भाषा और वहाँ के लोगों की मुँह ज़बानी को अपने कथा–साहित्य में यथार्थपरक ढंग से प्रस्तुत करते हैं। उनकी भाषा एवं गाली के सहज एवं सरल रूप ने भी उन्हें प्रभावित किया है। इसलिए उनके कथा–साहित्य में बोली–भाषा का वही स्वरूप दिखाई देता है, जो उनके आस–पास की है। कथाकार जिस समाज में रहता है, उस समाज की भाषिक संरचना उसे प्रभावित करती है। तभी वह उस समाज की संवेदना को ठीक ढंग से व्यक्त कर पाता है।

संदर्भ–स्रोत

1. विश्वनाथ : काशीनाथ सिंह के कथा–साहित्य का सामाजिक–सांस्कृतिक आयाम (शोध प्रबंध) 2010, जे0 एन0 यू0 नई दिल्ली, पृ. 75
2. सिंह, काशीनाथ : 'काशी का अस्सी', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, ग्यारहवाँ– 2015, पृ. 11–12
3. अरोरा, ज्ञानवती : समकालीन हिंदी कहानी यथार्थ के विविध आयाम, नई दिल्ली– 1994, पृ. 96
4. सत्यपाल शर्मा : शोध हस्तक्षेप (शोधजर्नल), सोसाइटी फॉर एजुकेशनल इम्पोवरमेण्ट, बनारस, जनवरी–जून 2012, पृ. 17
5. सिंह, काशीनाथ : 'लेखक की छेड़छाड़', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. 67
6. वही, पृ. 67–68
7. वही, पृ. 68
8. वही, पृ. 68–69
9. सिंह, काशीनाथ, घर का जोगी जोगड़ा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, पृ. 52
10. वही, पृ. 53
11. सत्यपाल शर्मा : शोध हस्तक्षेप (शोधजर्नल), सोसाइटी फॉर एजुकेशनल इम्पोवरमेण्ट, बनारस, जनवरी–जून 2012, पृ. 17
12. सिंह, काशीनाथ : 'लेखक की छेड़छाड़', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. 69
13. सिंह, काशीनाथ : 'गपोड़ी से गपशप', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. 6